# संन्यासी और ब्राह्मणका धनसे क्या सम्बन्ध?

परम पूज्यपाद प्रातःस्मरणीय पं० श्रीडूँगरदत्तजी महाराज बड़े ही उच्चकोटिके विद्वान्, परम त्यागी, तपस्वी, पूर्ण सदाचारी, कर्मकाण्डी, अनन्य भगवद्भक्त ब्राह्मण थे। मेरठके एक गाँवमें रहा करते थे। एक छोटी-सी संस्कृतकी पाठशाला थी, उसीमें आप ब्राह्मणों, क्षत्रियों तथा वैश्योंके लड़कोंको संस्कृत पढ़ाया करते थे, पर लेते किसीसे एक पाई भी न थे। बिना माँगे कहीं किसीसे कुछ आ जाता तो उसीमें संतोष करते थे। भगवान्की कृपासे आपको धर्मपत्नी भी परम तपस्विनी और संतोषी मिली थी। दोनोंका सारा समय भगवान् शालग्रामकी सेवामें व्यतीत होता था। आप किसीसे माँगते नहीं थे, इसलिये कभी-कभी कई दिनोंतक भोजन किये बिना भी रह जाना पड़ता था।

एक दिनकी बात है कि अकस्मात् एक दण्डी संन्यासी गाँवमें आ गये और उन्होंने आकर किसी कर्मकाण्डी ब्राह्मणका मकान पूछा। उन्हें भिक्षा करनी थी। लोगोंने पण्डित डूँगरदत्तजी महाराजका मकान बता दिया। स्वामीजी आपके पास आये। स्वामीजीको देखते ही पण्डितजी गद्गद हो गये और उनके श्रीचरणोंमें सिर टेककर बड़ी श्रद्धा-भक्तिसे उन्हें बैठाया। भिक्षाकी प्रार्थना की। स्वामीजी तो भिक्षा करने आये ही थे। पण्डितजी घरमें गये और धर्मपत्नीसे स्वामीजीके लिये भिक्षा बनानेको कहा।

ब्राह्मणीने कहा—'नाथ! घरमें तो एक दाना भी नहीं है, भिक्षा कैसे बनेगी?' पण्डितजी बड़ी चिन्तामें पड़े। अन्तमें यह

तय हुआ कि न माँगनेकी प्रतिज्ञा आज तोड़ी जाय और पड़ोसीके घरसे आटा ले आया जाय। ब्राह्मणी आटा-दाल ले आयी और भिक्षा तैयार हो गयी। दोनों कई दिनोंके भूखे थे, पर इन्हें अपनी चिन्ता नहीं थी। चिन्ता यह थी कि घरपर आये दण्डी संन्यासी कहीं भूखे न चले जायँ। पण्डितजीने भरसक प्रयास किया कि इस बातका तनिक भी स्वामीजीको पता न लगे। बड़ी श्रद्धा-भक्तिसे रसोई तैयार हो जानेपर सबसे पहले श्रीठाकुरजी महाराजको भोग लगाया गया और फिर स्वामीजीको बड़े प्रेमसे भिक्षा करायी गयी। पर न जाने कैसे स्वामीजीको आपकी निर्धनताका पता लग गया और स्वामीजीने मन-ही-मन कहा कि 'देखो कितने बड़े उच्चकोटिके विद्वान् हैं, फिर भी इन्हें कई दिनों भूखों रह जाना पड़ता है और इनका संतोष तथा त्याग इतना कि ये किसीको यह सब मालूम भी नहीं पड़ने देते।

स्वामीजीको पण्डितजीपर बड़ी दया आयी और उन्होंने पण्डितजीका दुःख-दारिद्र्य दूर करनेका निश्चय कर लिया। स्वामीजी रसायन बनाना जानते थे और आपके पास सोना भी था। आपने पण्डितजीको पास बैठाकर कहा कि 'पण्डितजी! मैं श्रीहरिद्वार जा रहा हूँ। अमुक दिन श्रीहरिद्वारमें जरूर आइये। मैं अमुक स्थानपर मिलूँगा। पण्डितजी इस रहस्यको नहीं समझ सके और उन्होंने स्वामीजीकी आज्ञाका पालन करनेकी दृष्टिसे श्रीहरिद्वार जाना स्वीकार कर लिया। आप ठीक समयपर श्रीहरिद्वार पहुँच गये और स्वामीजीसे मिले। स्वामीजी आपको पाकर बहुत प्रसन्न हुए। अगले दिन स्वामीजी और पण्डितजी दोनों श्रीगंगास्नानके लिये गये और वहाँ पण्डितजीने बड़ी श्रद्धा-भक्तिसे शास्त्रानुसार स्नान-ध्यान किया। जब आप भजन-

पूजनसे निवृत्त हो गये, तब स्वामीजीने पण्डितजीको अपने पास बुलाकर अपनी एक झोली निकाली और उसमेंसे आपने एक बहुमूल्य सुवर्णकी पाँच-सात तोलेकी मूर्ति निकाली और एक बड़ी सोनेकी डली निकाली तथा उसे हाथमें लेकर पण्डितजी महाराजसे कहा कि 'डूँगरदत्त! देखो यह सुवर्णकी मूर्ति है और कई तोले सुवर्णकी डली है; यह सब तुम ले लो। तुम बड़े निर्धन ब्राह्मण हो। इसलिये मैंने तुम्हें बुलाया था। जाओ अब तुम्हें इतना माल दे दिया है, तुम्हारी सारी निर्धनता भाग जायगी।'

पण्डितजी महाराज स्वामीजीके हाथसे सब चीजें अपने हाथमें लेकर एकदम उठे और सीधे श्रीगंगाजीके अंदर गहरे जलमें जा पहुँचे। संन्यासीजी इस रहस्यको न समझ सके। पण्डितजीने जाकर मन्त्र बोलते हुए उस बहुमूल्य मूर्तिको और सोनेकी डलीको एकदम जलमें बहा दिया और स्वयं बाहर निकल आये। आपको इतने बड़े धनको न तो लेते प्रसन्नता हुई और न फेंकते समय दुःख हुआ।

जब स्वामीजीने यह देखा तो आश्चर्यमें डूब गये और उन्हें इस घटनासे महान् दुःख हुआ तथा उन्होंने क्रोधमें भरकर पण्डितजीको बड़ी डाँट-फटकार सुनाते हुए कहा—'अरे डूँगरदत्त! तूने यह क्या किया? हमने तुझे यह सब इसलिये नहीं दिया था कि तू इन्हें गंगाजीमें ले जाकर फेंक दे।'

पण्डितजीने हाथ जोड़कर नम्रतासे कहा—

महाराज! क्षमा करें तो बताऊँ।

**स्वामीजी**—बताओ।

**पण्डितजी**—महाराज! मैंने यह ठीक ही किया।

**स्वामीजी**—कैसे ठीक किया?

**पण्डितजी**—अपना भी कल्याण किया और आपका भी कल्याण किया।

**स्वामीजी**—अरे मेरे पास भी नहीं रहने दिया और अपने पास भी नहीं रहने दिया। क्या यही कल्याण किया?

**पण्डितजी**—जी हाँ महाराज, यही कल्याण किया?

**स्वामीजी**—कैसे?

**पण्डितजी**—महाराज! मेरा तो कल्याण इसलिये हुआ कि हम ब्राह्मणोंको भला धनसे क्या मतलब? हमारा धन तो तप ही है। इस तुच्छ धनमें फँसकर हम प्रभुको भूल जाते और आपका कल्याण इसलिये हुआ कि शास्त्रोंमें संन्यासीके लिये द्रव्यका स्पर्श करना भी महान् पाप तथा निषिद्ध बतलाया गया है। इसलिये अब आपसे भी यह झंझट छूट गया। इस प्रकार मेरा और आपका दोनोंका ही कल्याण हो गया।

स्वामीजी महाराज तथा सैकड़ों दर्शनार्थी इस विलक्षण त्यागके दृश्यको देखकर चकित हो गये और दाँतोंतले अँगुली दबा ली तथा कहने लगे 'ऐसे कलिकालमें इस प्रकारके त्यागी ब्राह्मण मौजूद हैं। मैंने तो व्यर्थ ही संन्यास लिया। असली संन्यासी तो यही हैं। पण्डित डूँगरदत्तने वास्तवमें अपना और मेरा दोनोंका कल्याण किया। इनका कहना बिलकुल सत्य है। त्याग ही ब्राह्मण और संन्यासियोंका भूषण है।'

